AMOGHVARTA
ISSN : 2583-3189

छत्तीसगढ़ में कल्चुरि कालीन सामाजिक व आर्थिक दशा–एक ऐतिहासिक पुनरावलोकन

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. डी. एन. खुटे
सहायक प्राध्यापक
इतिहास अध्ययनशाला
पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

शोध सार

किसी भी देश व प्रांत के क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास के लिये प्रशासन अत्यंत महत्वपूर्ण एवं आवश्यक अंग होता है। प्राचीन छत्तीसगढ़ में प्रशासनिक व्यवस्था की जो परिपाटी थी वह प्रायः कल्चुरि काल में विद्यमान थीं। छत्तीसगढ़ में लम्बे समय तक कल्चुरि राजवंश की अधिसत्ता रही है। इस राजवंश ने 11वीं शताब्दी से लेकर 18वीं शताब्दी मध्यान्त तक शासन किया था। दक्षिण कोसल के कल्चुरि, चेदि कल्चुरियों के वंशज थे, जिनकी राजधानी पुरानी शहर त्रिपुरी थी। इन कल्चुरियों ने छत्तीसगढ़ के इतिहास में एक नए काल की शुरूआत की है। लक्ष्मण राज ने त्रिपुरी से अपने पुत्र कलिंगराज को भेजा। कलिंगराज ने न केवल तुम्माण को अपने अधिकार में किया वरन अपने बाहुबल से दक्षिण कोसल का जनपद भी जीत लिया। उसने तुम्माण को अपनी राजधानी बनाया और दक्षिण कोसल में कल्चुरियों की वास्ताविक सत्ता की स्थापना की एवं नये सिरे से कल्चुरि राज्य की नींव 1000 ई. में डालकर अपनी शक्ति में वृद्धि कर ली। कुछ समय बाद कल्चुरि राज्य रतनपुर और रायपुर दो भागों में विभाजित हो गया। रतनपुर में कल्चुरि शासन 1741 ई. तक रहा। रायपुर में इनकी एक शाखा आई जिसे लहुरी अर्थात कनिष्ठ शाखा भी कहते हैं। कल्चुरि कालीन छत्तीसगढ़ का समाज श्रम विभाजन के आधार पर बंटा हुआ था। उसके अधिकार और कर्तव्य बंटे हुए थे। प्राचीन छत्तीसगढ़ में वर्ण व्यवस्था अपना स्थान प्राप्त कर चुके थे किंतु कट्टरता का अभाव था। राजपद प्राप्त करने के लिये क्षत्रिय वंश होना आवश्यक नहीं था। हिंदू समाज का स्वरूप संकुचित न होकर व्यापक था। यही कारण है कि शक, कुषाण, गुर्जर आदि विदेशी जातियों को हिंदू समाज में समाहित कर लिया गया। ब्राह्मणों का विशेष स्थान तथा सम्मान था।

मुख्य शब्द

कल्चुरि, रतनपुर, माहिष्मति, तुम्मान, दोगनी, पंसेरी.

कल्चुरियों का उद्भव

भारत वर्ष के इतिहास में कल्चुरि नरेशों का स्थान कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। 550 ई. से 1740 ई. तक लगभग बारह सौ वर्षों तक कल्चुरि नरेशों ने भारत के उत्तर अथवा दक्षिण किसी न किसी प्रदेश में अपना राज्य चलाया है। इस वंश का संस्थापक कौन था? इस विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है।[1] भारतीय राजवंशों में कल्चुरि राजवंश बहुत पुराना है।[2]

विस्तृत क्षेत्रों और विभिन्न लेखों, ताम्रपत्रों में इस राजवंश का नाम कटच्छुरि, कलत्सुरि, कल्चुर्य, कलचुति एवं कल्चुरि आदि मिलता है। वस्तुतः यह तुर्क शब्द कुलचुर से संबंधित बताया गया है, जो एक उच्च पद का द्योतक है।[3] अर्थात् कल्चुरि निश्चयतः उच्च कुल के रहे होंगे। चेदि प्रदेश पर शासन करने के कारण उन्हें चेदि, वैद्य तथा चेदिकुल भी कहा गया है।[4] कुछ स्थानों पर उन्हें अहिहय भी कहा गया है।

पांचवीं–छठवीं ई. शताब्दी बाद भारतीय राजा गण पुराण कालीन सुप्रसिद्ध राजवंशों से अपना संबंध जोड़ने में गौरव का अनुभव करने लगे। किसी ने बड़े अभिमान से राजा नल के वंश से अपना संबंध बताया, तो किसी ने पांडव कुल से संबंध जोड़ने का प्रयास किया। कल्चुरि नरेश भी इसका अपवाद नहीं थे, उन्होंने अपना संबंध पुराण प्रसिद्ध कार्तवीर्य हैहय से जोड़ा। हैहय वंश का वृत्तान्त पुराणों एवं प्राचीन साहित्यों में मिलता है। प्राचीन दक्षिण कोसल की राजधानी रतनपुर के हैहय वंशी राजाओं ने अपना जो इतिहास (बाबू रेवाराम कृत रतनपुर का इतिहास) लिखवाया उसके अनुसार इस वंश का विवरण इस प्रकार है– ब्रह्म के पुत्र अत्रि हुए, उसके पुत्र सोम हुये जिनसे सोमवंशी उत्पन्न हुए। इस वंश में ऐल नामक राजा हुआ था जिसके वंश ययाति, यदु और पुरू थे। यदु का पुत्र हैहय था जिसके अपना राज्य नर्मदा तट पर माहिष्मति में स्थापित किया।[5]

डॉ. मिराशी के अनुसार: कल्चुरि नरेश अपने को हैहय सहसार्जुन कहलाने में गौरव का अनुभव करते थे इसलिये शिलालेखों में उनका उल्लेख हैहय वंश के रूप में हुआ है।[6] कुछ इतिहास कार विशेषकर डॉ. देवदत्त पन्त भण्डारकर ने चन्दबरदाई कृत पृथ्वीराज रासो के आधार पर इन्हें विदेशी मानते है, किन्तु डॉ. मिराशी ने इसका खण्डन किया है। कल्चुरि कौन थे? इसका निराकरण नहीं हो पाया है। लेकिन कल्चुरि और हैहयवंशी एक ही थे। इतिहास कारों ने इन्हें चन्द्रवंशी क्षत्रिय माना है। कल्चुरि राजवंश की प्रथम राजधानी माहिष्मति थी। यहां राज्य करते हुए कल्चुरि इतने समृद्ध और शक्तिशाली हो गये थे कि इनका राज्य विस्तार गुजरात, महाराष्ट्र और मालवा पर ही नहीं अपितु कोंकण तक अपनी प्रभुसत्ता स्थापित किये। उन्होंने कालिंजर, प्रयाग, त्रिपुरी, काशी, तुम्माण, रतनपुर, खल्लारी, रायपुर में अपनी राजधानी स्थापित किये।[7]

छत्तीसगढ़ के कल्चुरि

त्रिपुरी के कल्चुरियों की एक शाखा छत्तीसगढ़ में आ बसी। बिलासपुर जिले में प्रायः गोलाकार एक पत्थर श्रेणी है जिसके भीतर लगभग 30 गांव बसे है। मुख्य गांव तुम्मान है जिसके कारण पर्वत से घिरे हुए समूचे स्थल का नाम तुम्मान खोज रख लिया गया है। शिलालेखों में इस ग्राम या पुर का नाम तुम्मान लिखा हुआ मिलता है।[8]

डॉ. मिराशी ने लिखा है: ईसा पश्चात् 9वीं शताब्दी के अंत में त्रिपुरी के कल्चुरियों ने दक्षिण कोसल में अपनी शाखा स्थापित करने का श्रेय प्राप्त किया था। अभिलेखों से यह ज्ञात होता है कि प्रथम कोकल्ल के पुत्र द्वितीय शंकरगण ने कोसल नरेश से पालि देश जीत लिया था। यह पालि देश बिलासपुर जिले के पाली नामक स्थान के आसपास का प्रदेश होगा।[9]

तुम्माण में आगमन

दक्षिण कोसल के कल्चुरि, चेदि कल्चुरियों के वंशज थे, जिनकी राजधानी पुरानी शहर त्रिपुरी थी (जिले वर्तमान में तेवर कहा जाता है) इन कल्चुरियों ने छत्तीसगढ़ के इतिहास में एक नए काल की शुरूआत की है। 9वीं शताब्दी के अंत में त्रिपुरी के कल्चुरियों ने दक्षिण कोसल में अपनी शाखा स्थापित करने का प्रयत्न किया। इस समय कोकल्ल के द्वारा मध्य भारत के पूर्वी भाग में एक बहुत ही सुदृढ़ शासन की स्थापना की गई थी। जहां पहले वाकाटक परिव्राज्क तथा उच्छकल्प के शासक गुप्तों के पतन के बाद शसन करते थे। कोकल्ल का उल्लेख सबसे पहले उसके दामाद कृष्णराज द्वितीय के जो कि मान्यखेट के राष्ट्रकूट वंश के थे शिलालेख ख में वर्णित है।[10] अभिलेखों से यह ज्ञात होता है कि कोकल्ल प्रथम के पुत्र शंकरगण द्वितीय अर्थात् मुग्धतुंग प्रसिद्ध धवल ने कोसल नरेश से पालि प्रदेश (बिलासपुर के पालि के आसपास का क्षेत्र) जीत लिया था। इस समय वहां बाणवंशी विक्रमादित्य प्रथम राज्य कर रहा था। इसके अथवा इसके उत्तराधिकारी से शंकरगण द्वितीय ने यह प्रदेश जीता होगा। पाली रतनपुर के उत्तर पूर्व में 12 कि.मी. दूर बिलासपुर जिला में स्थित है। यह स्थल 6वीं शताब्दी ई. से दक्षिण कोसल

ISSN : 2583-3189 (E), 2583-0775 (P)
Year-03, Volume-03, Issue-03

का प्रमुख राजनीतिक केन्द्र रहा है। पाली के शिवमंदिर के गर्भगृह के द्वार पर लगे शिलालेख जिसका उल्लेख भी मिराशी ने स्टडीज इन इण्डोलाजी में रूल आफ बानकिंग आफ महाकोसल के पृष्ठ 68 में तथा कार्पस इन्सक्रिप्शन इंडिकरम वाल्युम चार के पृष्ठ 10 में, बालचंद जैन के उत्कीर्ण लेख के पृष्ठ 24 में एवं मिराशी ने कल्चुरि नरेश और उनके काल, पृष्ठ 39 में किया है।

मंडलेश्वर का यह वंश 125 वर्षों तक तुम्माण में चलता रहा, परन्तु बाद में कमजोर होने पर सोमवंशियों ने वहां अपना अधिकार कर लिया था तभी लक्ष्मण राज ने त्रिपुरी से अपने अन्य पुत्र कलिंगराज को भेजा। कलिंगराज ने न केवल तुम्माण को ही फिर से अपने अधिकार में किया वरन अपने बाहुबल से दक्षिण कोसल का जनपद भी जीत लिया। उसने तुम्माण को अपनी राजधानी बनाया और दक्षिण कोसल में कल्चुरियों की वास्ताविक सत्ता की [illegible][11]

रतनपुर में कल्चुरि शासन 1741 ई. तक रहा। रायपुर में इनकी एक शाखा आई जिसे लहुरी अर्थात् कनिष्ठ शाखा भी कहते हैं। 1375 ई. में कनिष्ठ शाखा ने रायपुर राजधानी से शासन प्रारंभ किया।[12]

सामाजिक दशा

कल्चुरि कालीन छत्तीसगढ़ का समाज श्रम विभाजन के आधार पर बंटा हुआ था। उसके अधिकार और कर्तव्य बंटे हुए थे। प्राचीन छत्तीसगढ़ में वर्ण व्यवस्था अपना स्थान प्राप्त कर चुके थे किंतु कट्टरता का अभाव था। राजपद प्राप्त करने के लिये क्षत्रिय वंश होना आवश्यक नहीं था। हिंदू समाज का स्वरूप संकुचित न होकर व्यापक था। यही कारण है कि शक, कुषाण, गुर्जर आदि विदेशी जातियों को हिंदू समाज में समाहित कर लिया गया। ब्राह्मणों का विशेष स्थान तथा सम्मान था। छत्तीसगढ़ के कल्चुरि लेखों में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य का उल्लेख मिलता है, किन्तु शूद्र का उल्लेख नहीं मिलता है। इस युग की जाति या वर्ग को इस प्रकार उल्लेखित किया गया हैः

ब्राह्मण

चर्तुवर्ण व्यवस्था में ब्राह्मणों को विशेष मान दिया जाता था। ब्राह्मणों को 'पंचमहायज्ञादि' धार्मिक कृत्य करने के लिये राजा की ओर से मंगल कार्य के प्रसंग में भूमिदान दिया जाता था।[13] इस समय ब्राह्मणों में द्रविड़, गौड़ जैसे भेद नहीं थे, केवल वेद, शाखा और गोत्र के आधार पर ही भेद माना जाता था।[14] ब्राह्मण अपने मूल स्थान को ध्यान में रखते थे और उसका उल्लेख गर्व पूर्वक करते थे।

कल्चुरियों के दरबार में राजाश्रय पाने के लिये दूर–दूर के प्रदेशों से ब्राह्मण आया करते थे। शिलालेखों में ज्ञात होता है कि रतनपुर के कल्चुरि राजा के यहां आश्रय प्राप्ति के लिये उत्तर प्रदेश के शोणभद्र और मध्यभारत के कुम्मटी नामक ग्रामों से ब्राह्मण आये हुए थे। कुछ ब्राह्मणों के साथ उनके मूल स्थान को प्रदर्शित करने वाले 'माथुर', 'नागर' जैसे विशेषण जुड़े थे। लगता है इसी भांति बाद में ब्राह्मणों की उपजातियों का प्रादुर्भाव हुआ।[15] इनके नाम के आगे पंडित, ठाकुर, गैंता आदि शब्द तथा नाम के अंत में प्रायः शर्मा शब्द आता है। मिश्र, त्रिपाठी आदि उपनाम 15–16वीं शताब्दी के लेखों में मिलते हैं।[16]

अनेक ब्राह्मण वेदों और शास्त्रों के अध्ययन में ही अपना समय व्यतीत करते थे। एक से अधिक वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण को द्विवेदी, त्रिवेदी, चतुर्वेदी जैसे पदवी प्रदान की जाती थी। कई राज दरबार में होने वाली काव्य स्पर्धा और वाद–विवाद में भी भाग लेते थे। ग्रहण आदि विषयों पर दरबार में ज्योतिषियों का वाद–विवाद होता था एवं सत्य भविष्य वक्ता को राजकीय सम्मान दिया जाता था। कुछ ब्राह्मण गृह त्याग, सन्यास भी ग्रहण कर लेते थे।[17]

मंत्री पद पर प्रायः ब्राह्मण नियुक्त किये जाते थे एवं संकटकालीन परिस्थितियों में राजा को सलाह आदि दिया करते थे। ऐसे चतुर विद्वानों का उल्लेख कल्चुरि युगीन अभिलेखों में गर्व के साथ किया गया है। पुरूषोत्तम तथा गंगाधर आदि मंत्रियों का उल्लेख अभिलेखों में है।[18] कल्चुरि नरेशों ने समय–समय पर ब्राह्मणों को ग्राम दान में दिये थे। ग्राम दान केवल उन्हीं ब्राह्मणों को दिया जाता था जो कुल और ज्ञान में श्रेष्ठ होते थे। ब्राह्मण युद्ध कला कौशल में भी निपुण होते थे। कई ब्राह्मणों ने राज प्रशस्तियों एवं रचनाएँ लिखी थीं।[19]

क्षत्रिय

समाज में क्षत्रियों का सम्मान था। कल्चुरि नरेश स्वयं को क्षत्रिय कहते थे। उनके ताम्रपत्रों में कल्चुरि नरेश अपने को कार्तवीर्य सहस्रार्जुन का वंशज मानते थे। राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर उनकी नियुक्ति हुआ करती थी। उन्हें सेना तथा प्रशासन के उच्च पदों पर नियुक्त किया जाता था। क्षत्रिय अधिकारियों के नाम के अन्त में ''भट'' शब्द आता है। तत्कालीन चालुक्य, राष्ट्रकूट, चंदेल, पाल इत्यादि क्षत्रिय वंशों से कल्चुरियों का वैवाहिक संबंध था। कई क्षत्रिय ब्राह्मणों की तरह विद्या के क्षेत्र में निपुण थे। अनेक अभिलेखों में कुमार पाल नामक हैहयवंशीय का उल्लेख है जो कि राजनीति, साहित्य तथा ज्योतिष का ज्ञाता था। उन्होंने कई प्रशस्तियां लिखी, जो उत्तम काव्य गुणों से युक्त थीं।[20]

वैश्य

वैश्य जाति को समाज में विशिष्ट स्थान प्राप्त था। इस जाति के पास व्यापार व उद्योग के सूत्र होते थे। यह वर्ग धनी व सम्पन्न था इसके कारण स्थानीय कामकाज में उनका एकाधिकार था। कल्चुरियों के लेखों में ''यश'' नामक वैश्य का उल्लेख रतनपुर के 'पुरप्रधान' के रूप में अनेक बार आया है। यह वर्ग युद्ध में भी भाग लेते थे तथा अपने पराक्रम को प्रदर्शित भी करते थे। कल्चुरियों के वैश्य सामंत बल्लभराज के अनेक लेखों में उसे गौड़ देश में मिली विजय का वर्णन आया है। इसने अनेक मंदिर, तालाब, उद्यान आदि का निर्माण करवाया।[21] ग्रामों में बसे वैश्य पंचायतों में महत्वपूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित थें। बनिया का काम करने वाला वात्सल्य कहलाता था।

कायस्थ

रतनपुर के कल्चुरि राजाओं के राज्य में अनेक सम्पन्न व विद्वान कायस्थ रहते थे। यह वर्ग ब्राह्मणों के समान विद्या के प्रेमी थे। कायस्थ प्रायः हिसाब–किताब रखते थे। कई लेखों में इन्हे 'करणिक' भी कहा गया है राज्य के प्रशासन व निर्माण कार्यों में कायस्थ जाति का उल्लेखनीय योगदान रहा है। रतनसिंह नामक एक कायस्थ थे मल्लार में शिवमंदिर बनवाया था।[22]

अन्य जातियाँ

अन्य वर्गों के लोग भी यहॉ रहते थे। कल्चुरि कालीन शिलालेखों में सूत्रधार जाति का उल्लेख है। यह जाति शिल्पकला के क्षेत्र में प्रवीण थी। प्रायः राज्य के मंदिरों का निर्माण यही किया करते थे। खल्लारी से प्राप्त कल्चुरि लेख में देवपाल नामक एक मोची ने खल्लवाटिका (खल्लारी) में विष्णु मंदिर बनवाया था। शिल्पी जाति द्वारा उत्कीर्ण लेखों की संख्या अत्यधिक है।[23]

छत्तीसगढ़ क्षेत्र वनों से आच्छादित है जिसके कारण यहां आरण्यक सभ्यता विद्यमान रही। आदिवासी क्षेत्रों में गोड़, परजा आदि रहते थे बैगा–मुनिया लोगों को आदिवासी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण स्थान था। तंत्र–मंत्र को सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ क्षेत्र में मान्यता प्राप्त थी। अधिकांश लोग गांवों में रहकर कृषि, मजदूरी करते थे। प्रत्येक गांव में विशिष्ट कार्य करने वाले लोगों जैसे– लुहार, नाई, धोबी, कफमहार आदि को समयानुसार उचित सम्मान प्राप्त होता था। उनके मकान साफ–सुथरे, घास–फूस के छाजन वाले होते थे। लोग सीधे सादे तथा ईमानदार होते थे। ग्रामीण वाद–विवाद का निर्णय पंचायतें करती थीं। उसकी अपील राजा के पास की जाती थी।[24] पंचायत पंचकूल नामक समूह के जिम्मे रहती थी जिसके सदस्य महत्तर कहलाते थे। ग्राम प्रमुख ग्रामकूट या भौटिक कहलाते थे।

समाज में महिलाओं की दशा

कल्चुरि कालीन अभिलेखों में स्त्रियों का उल्लेख बड़े सम्मान के साथ हुआ है। राज परिवार की महिलाएँ जैसे– नोनल्ला, उल्हण देवी, लाच्छल्ल देवी ने राजकीय एवं धार्मिक क्षेत्रों में अपना वर्चस्व स्थापित किया था। पृथ्वी देव द्वितीय के रतनपुर शिलालेख में यह उल्लेख मिलता है कि वल्लभराज ने अपने पत्नी की प्रेरणा से अनेक धार्मिक व लोक कल्याणकारी कार्य किये थे। इसी प्रकार जाजल्लदेव प्रथम ने अपनी माता के आदेश पर बस्तर के राजा सोमेश्वर देव को कैद से मुक्त कर दिया था।[25]

इस युग में बहुविवाह की प्रथा विद्यमान थी। राजा रतनदेव तृतीय की दो रानियाँ रत्ना और पद्मा थीं, इसी

प्रकार अल्हन देव की तीन रानियाँ थीं। लेकिन समाज में आमतौर पर एकल विवाह का ही प्रचलन था। समाज में बाल विवाह का भी प्रचलन था। रतनपुर में कई सती चौरे है। शिवरीनारायण के कल्चुरियों की छोटी शाखा का उल्हण देव त्रिपुरी के जयसिंह से ताड़ते हुए रणस्थल में मारा गया था। उसी समय उसकी तीनों रानियाँ सती हुई थी।[26]

सामान्यतः महिलाओं को समाज में आदर की दृष्टि से देखा जाता था लेकिन वे बहु विवाह एवं सती प्रथा जैसी कुप्रथा का शिकार भी होती थी।

संयुक्त परिवार प्रथा

कल्चुरि कालीन छत्तीसगढ़ में संयुक्त परिवार की पद्धति प्रचलित थी। मल्लार के शिलालेख में कायस्थ रत्नसिंह, उनकी पत्नी, एक पुत्र, दो बहुओं, दो नातियों, एक नातिन और दो अन्य रिश्तेदारों के साथ–साथ रहने का उल्लेख है।[27] तत्कालीन समय में लोगों का मुख्य भोजन चांवल ही थी विशेष उत्सवों के अवसर पर विशेष व्यंजन बनाये जाते थे। लोग तंबाकू और बीड़ी का सेवन करते थे तथा उनमें संतोष का भाव अधिक रहता था। लोगों के सामाजिक व्यवहार में मिली–जुली संस्कृति के तत्व दिखाई पड़ते थे।[28]

लोग अंधविश्वास से बड़े प्रभावित थे। तंत्र–मंत्र की मान्यता प्रचलित थी। यहां की आबादी का घनत्व बहुत कम था लोगों में सैनिक गुणों का अभाव था, वे शांति प्रिय थे तथा उन्हें युद्ध या संघर्ष पसंद नहीं था।[29]

शिक्षा, साहित्य एवं भाषा

साहित्यिक दृष्टि से भी कल्चुरिकाल में छत्तीसगढ़ अत्यन्त समृद्ध था। नारायण, अल्हण, कीर्तिधर, वत्सराज, धर्मराज, मागे, सुरगण रतनसिंह, कुमारपाल, त्रिभुवन पाल, देवपणि, नरसिंह और दामोदर मिश्र जैसे कवियों के नाम का उल्लेख कल्चुरि लेखों में प्राप्त होता है। संस्कृत के साथ प्राकृत भाषा के कवियों को भी कल्चुरि दरबार मे राजाश्रय प्राप्त था। यहॉ विद्या का भी बहुत प्रसार था। पाठशालाओं और महाविद्यालयों को राजकीय अनुंदान प्राप्त होता था। गुरू आश्रम की परम्परा विद्यमान थी। कल्चुरिकालीन साहित्य की प्रमाणिकता बाबू रेवाराम द्वारा लिखित ग्रन्थ तवारीख ए हैहयवंशीय राजाओं की के द्वारा होती है। इसके अलावा पण्डित शिवदत्त शास्त्री ने रतनपुर आख्यान लिखा था जिसमें छत्तीसगढ़ के जमींदारों का इतिहास भी है। इन्होने इतिहास समुच्चय पुस्तक की रचना भी की है जिसमें रतनपुर के इतिहास के सम्बन्ध में जानकारी मिलती है। इस काल में साहित्यकारों की अपेक्षा प्रशस्तिकार कवि अधिक थे, जो ब्राह्मण व कायस्थ होते थें प्रकृति विज्ञान व आयुर्विज्ञान की दृष्टि से यह क्षेत्र विकसित था। देखा जाय तो जनसामान्य में यहॉ छत्तीसगढ़ी बोली का प्रचार–प्रसार था, किन्तु राजकार्य संस्कृत भाषा में होता था।[30]

कल्चुरि कालीन आर्थिक दशा

कल्चुरि शासन काल में छत्तीसगढ़ की आर्थिक स्थिति समृद्ध थी। इस काल की आर्थिक स्थिति के बारे में अभिलेखों, ताम्रपत्रों, दानपत्रों से कोई विशेष जानकारी नहीं मिलती फिर भी इस युग के निर्माण कार्यों जैसे मंदिर, तालाब, बाग बगीचे, शांतिमय वातावरण सुदृढ़ आर्थिक स्थिति के परिचायक हैं। रतनपुर, रायपुर, तुम्माण, जाजल्लपुर, मल्हार, विकर्णपुर, खल्लारी इत्यादि कल्चुरि कालीन प्रमुख नगर थे, ये नगर समृद्ध थे।[31]

छत्तीसगढ़ के अधिकांश लोगों के आर्थिक जीवन का आधार कृषि एवं पशुपालन था। यहां की प्रमुख उपज चांवल, कोदो, गेहूँ, दाल आदि थीं। ये वस्तुएं यहां पर्याप्त मात्रा में होती थी, पर इनकी बिक्री की समुचित व्यवस्था नहीं थी, क्योंकि यहां यातायात के साधन बहुत कम थे। इसलिए किसानों को उनके उत्पादन का भरपूर लाभ नहीं मिल पाता था। इसके कारण कृषि योग्य भूमि का विकास नहीं हो पाता था। यहां जंगली वस्तुओं का उत्पादन अधिक मात्रा में होता था जिनमें हर्रा, चिरौंजी, आंवला, शहद आदि प्रमुख थे। यहां गाय, बैल, भैंस, भेड़, बकरी आदि जानवर लोगों के द्वारा पाले जाते थे व पशुपालन से भी लोग धन उपार्जन करते थे।[32]

किसी भी वस्तु को खरीदने या बेचने के लिये एक साधन की आवश्यकता पड़ती है। दक्षिण कोसल में कल्चुरि

कालीन सिक्कों के प्रमाण विभिन्न अंचलों में मिले है। खैरागढ़ क्षेत्र से कल्चुरि शासकों के 200 तांबे के सिक्के प्राप्त हुए है।[33] जाजल्ल देव, रत्नदेव तथा पृथ्वी देव के सोने के 136 सिक्के रायपुर क्षेत्र के दलदल सिवनी से प्राप्त हुए है। धनपुर (बिलासपुर) से कल्चुरि कालीन तांबे के 390 सिक्के मिले है तथा भगौड़ (बिलासपुर) से सोने के 9 सिक्के प्राप्त हुए है।[34]

छत्तीसगढ़ में वस्तुओं का क्रय विक्रय कौड़ियों के माध्यम से होता था। कौड़ियों का मान इस प्रकार था[35]:

1. चार कोरी – एक गंडा
2. पांच गंडा – एक कोरी
3. बीस कोरी – एक दोगनी
4. सोलह दोगनी– एक रूपया

कुछ वस्तुएं तौलकर बेची जाती थी। तौल का मान इस प्रकार बेची जाती थी:

1. पांच सेट – एक पंसेरी
2. आठ पंसेरी – एक मन

कल्चुरि काल में राजा की आय का प्रमुख स्त्रोत भूमि कर था। भूमि की नाप हलों की संख्या में दर्शायी जाती थी। एक हल भूमि का अर्थ होता था पांच एकड़ जमीन।[36] कर का भार जनता पर अधिक था इसका कारण था सरकारी कर्मचारियों द्वारा कर वसूली के कार्य में उदासीन होना। लगान ज्यों–ज्यों बढ़ता गया, त्यों–त्यों पैदावार कम होती गयी। इसके कारण किसान एक स्थान को छोड़कर अन्यत्र जाने लगे जिससे उत्पादन कम होने लगा और सरकार की आर्थिक स्थिति बिगड़ती गयी। फलतः सरकार दिवालिया होने की कगार पर पहुंच गयी। कल्चुरि राज्य के पतन का एक कारण यह भी था। राजस्व विभाग का मुख्य अधिकारी महाप्रमातृ होता था जो भूमि की माप करवाकर लगाान निर्धारित करता था। नमक कर, खान कर, वन चारागाह, बाग–बगीचा, आम, महुए, आदि पर लगने वाले कर राजकीय आय के स्त्रोत थे। नदी के पार करने पर तथा नाव आदि पर कर लगाया जाता था। इनके अतिरिक्त मण्डी में बिक्री के लिये आई हुई सब्जीयों/सामग्रियों पर कर लगाया जाता था। प्रत्येक घोड़े के लिये 2 पौर और हाथी के लिये 4 पौर कर लगाया जाता था। पौर चांदी का एक सिक्का होता था। मण्डी में सब्जी बेचने के लिये युगा नामक परवाना लेना पड़ता था जो दिन भर के लिये होता था। 2 युगाओं के लिये 1 पौर दिया जाता था। कर वसूलने वाला शोल्किक कहलाता था। छत्तीसगढ़ की कुछ विशिष्ट जातियां हस्तकौशल और गृह उद्योग से धन उपार्जित कर अपनी जीविका चलाती थी।[37]

कल्याण साय और उसके पुत्र लक्ष्मण साय के ''जमाबंदी'' और ''देशवही'' से यह जानकारी प्राप्त होती है कि करीब 61 लाख रूपये भू राजस्व के रूप में प्राप्त होता था।[38] शहरों की प्रगति वास्तविक रूप में व्यापार और उद्योग की उन्नति पर निर्भर थी। पांडुका सिरकट्टी के पास से नदी मार्ग से उत्कल व्यापार होता था।[39] इन सब के अतिरिक्त कल्चुरि नरेश राज्य के कोषालय को शत्रुओं के खजाने को लूटकर एवं पराजित राज्यों से वार्षिक भेंट या कर सेटलमेंट अधिकारी प्राप्त कर बढ़ाते थे। इस काल में नगरों की अपेक्षा ग्रामों पर अधिक ध्यान दिया जाता था जिसमें इनकी संख्या अधिक थी, किन्तु नये नगरों का निर्माण भी हो रहा था जैसे– रतनपुर, रायपुर, मल्लालपत्तन, बिलासपुर, जांजगीर, विकर्षपुर, तेजल्लपुर आदि। राजा अपने साम्राज्य के विस्तार के लिये तत्पर रहते थे। पराजित राजाओं से वार्षिक कर लिया जाता था। राजा कल्याणसाय जब मुगल बादशाह जहाँगीर से मिलने दिल्ली गये तब उसके साथ आश्रित 22 राजा भी गये थे। राजा का राजस्व 9 लाख रूपये वार्षिक था। उनकी सेना में 116 हाथी थे। कल्याणसाय ने जहाँगीर को 1 लाख रूपये नगद और 60 हाथी भेंट में दिये थे। इससे राजा की अच्छी स्थिति का परिचय मिलता है। कल्चुरि लेखों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि कल्चुरिकालीन छत्तीसगढ़ की आर्थिक स्थिति सम्पन्न व समृद्ध थी।[40]

निष्कर्ष

इस प्रकार अध्ययन से ज्ञात होता हे कि कल्चुरि कालीन समाज मे वर्ण–व्यवस्था प्रचलित थी किंन्तु कट्रता नहीं थी। हिन्दू समाज का स्वरूप संकुचित न होकर व्यापक था। लोगों को वर्ण के आधार पर कार्य करने की बाध्यता नहीं थी। कल्चुरियों का एक सामंत वैश्य जाति का था। कल्चुरि राजा के मंत्री बहुदा ब्राह्मण हुआ करते थे। समाज में क्षत्रियों का मान था, कल्चुरि नरेश स्वयं को क्षत्रिय कहते थे। वैश्य व्यापार कार्य करते थे। शिल्पी जाति के लोग भी यहॉ रहते थे। देवपाल मोची ने खल्लारी में विष्णु मंदिर बनवाया था। इससे ज्ञात होता है कि कल्चुरि कालीन समाज में सामाजिक समरसता का अदभूत उदाहरण है।

कल्चुरि शासन काल में छत्तीसगढ़ की आर्थिक स्थिति समृद्ध थी। इस युग के निर्माण कार्यों जैसे मंदिर, तालाब, बाग बगीचे, शांतिमय वातावरण सुदृढ़ आर्थिक स्थिति के परिचायक हैं। रतनपुर, रायपुर, तुम्माण, जाजल्लपुर, मल्हार, विकर्णपुर, खल्लारी इत्यादि कल्चुरि कालीन प्रमुख नगर थे, ये नगर समृद्ध थे। छत्तीसगढ़ के अधिकांश लोगों के आर्थिक जीवन का आधार कृषि एवं पशुपालन था। यहां की प्रमुख उपज चांवल, कोदो, गेहूँ, दाल आदि थीं। यहां जंगली वस्तुओं का उत्पादन अधिक मात्रा में होता था जिनमें हर्रा, चिरौंजी, आंवला, शहद आदि प्रमुख थे। यहां गाय, बैल, भैंस, भेड़, बकरी आदि जानवर लोगों के द्वारा पाले जाते थे व पशुपालन से भी लोग धन उपार्जन करते थे। यहां यातायात के साधन बहुत कम थे।

संदर्भ सूची

1. मिराशी, वासुदेव विष्णु, *कापर्स इन्क्रिप्शन इंडीकेरम उटकमंड* भाग–4, 1955, पृ. 9।
2. रायबहादुर, हीरालाल, एपीग्राकिया इंडिका, पृ. 40।
3. पूर्वोक्त, पृ. 41।
4. कनिंघम, अलेक्जेंडर, इन आर्कयोलाजिकल सर्वे आफ इंडिया रिपोर्ट, खंड 17, 1878, पृ. 69।
5. यदु, हेमू, *छत्तीसगढ़ का गौरवशाली इतिहास,* बी. आर. पब्लिशिंग कार्पो. दिल्ली, 2006, पृ. 41।
6. वर्मा, भगवान सिंह, *छत्तीसगढ़ का इतिहास,* मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, 2003, पृ. 34।
7. वीरेन्द्र सिंह, *छत्तीसगढ़ विस्तृत अध्ययन,* अरिहंत पब्लिकेशन मेरठ, 2008, पृ. 227।
8. बेहार, रामकुमार, *छत्तीसगढ़ का इतिहास,* छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी रायपुर, 2009, पृ. 80।
9. पाण्डेय, ऋषि राज, *दक्षिण कोसल के कल्चुरि,* छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी रायपुर, 2008, पृ. 63।
10. पूर्वोक्त, पृ. 64–65।
11. वीरेन्द्र सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 227।

12 वर्मा, राजेन्द्र, रायपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, 1973, पृ.61।

13. पाण्डेय, ऋषिराज, *छत्तीसगढ़ (दक्षिण कोसल) के कल्चुरि,* छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी रायपुर, पृ. 196।
14. पूर्वोक्त, पृ. 197।
15. अग्रवाल, पी.सी., *इंडिया रीजनल स्टडीज,* छत्तीसगढ़ बेसिन, 1968, पृ. 267।
16. पाण्डेय, ऋषिराज, पूर्वोक्त, पृ. 197।
17. पूर्वोक्त, पृ. वही।

18. वीरेन्द्र सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 235।
19. शुक्ला, सुरेशचंद एवं अर्चना शुक्ला, *छत्तीसगढ़ का समग्र इतिहास,* मातुश्री पब्लिकेशन रायपुर, 2018, पृ. 23।
20. पूर्वोक्त, पृ. 24।
21. पूर्वोक्त, पृ. वही।
22. पूर्वोक्त, पृ. वही।
23. पाण्डेय, ऋषिराज, पूर्वोक्त, पृ. 197।
24. वर्मा, भगवान सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 45।
25. वीरेन्द्र सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 235।
26. शुक्ला, सुरेशचंद्र, पूर्वोक्त, पृ. 25।
27. पूर्वोक्त, पृ. वहीं।
28. वर्मा, भगवान सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 45।
29. पूर्वोक्त, पृ. वही।
30. वीरेन्द्र सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 235।
31. शुक्ला, सुरेशचंद्र, पूर्वोक्त, पृ. 25।
32. वर्मा, भगवान सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 46।
33. शुक्ला, शांता, *छत्तीसगढ़ का सामाजिक–आर्थिक इतिहास,* नेशनल पब्लिशिंग हाउस 1988, दिल्ली, पृ. 16।
34. पाण्डेय, ऋषिराज, पूर्वोक्त, पृ. 158–159।
35. वर्मा, भगवान सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 46–47।
36. पूर्वोक्त, पृ. 47।
37. पूर्वोक्त, पृ. 47।
38. शुक्ला, सुरेशचंद्र, पूर्वोक्त, पृ. 25–26।
39. मिश्र, रमेन्द्रनाथ एवं लक्ष्मीधर झा, छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, सेन्ट्रल बुक डिपो, रायपुर, 1998, पृ. 46।
40. वीरेन्द्र सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 235।

——==00==——